अंक : 2, जून 2016

LEISA INDIA

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण
जून 2016, अंक 2

यह अंक लीज़ा इण्डिया टीम के साथ मिलकर जी०ई०ए०जी० द्वारा प्रकाशित की जा रही है, जिसमें लीज़ा इण्डिया में प्रकाशित अंग्रेजी भाषा के कुछ मूल लेखों का हिन्दी में अनुवाद एवं संकलन है।

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप
224, पुर्दिलपुर, एम०जी० कालेज रोड,
पोस्ट बाक्स 60, गोरखपुर- 273001
फोन : +91-551-2230004,
फैक्स : +91-551-2230005
ईमेल : geagindia@gmail.com
वेबसाइट : www.geagindia.org

ए.एम.ई. फाउण्डेशन
नं० 204, 100 फीट रिंग रोड, 3rd फेज़, 2nd ब्लाक,
3rd स्टेज, बनशंकरी, बैंग्लोर- 560085, भारत
फोन : +91-080-26699512,
+91-080-26699522
फैक्स :+91-080-26699410,
ईमेल : leisaindia@yahoo.co.in

लीज़ा इण्डिया
लीज़ा इण्डिया अंग्रेजी में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका है, जो इलिया की सहभागिता से ए.एम.ई. फाउण्डेशन बैंग्लोर द्वारा प्रकाशित होती है।

मुख्य सम्पादक
के.वी.एस. प्रसाद, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्ध सम्पादक
टी.एम.राधा., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

अनुवाद समन्वय
अर्चना श्रीवास्तव, जी.ई.ए.जी.
पूर्णिमा, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्धन
रूक्मिणी जी.जी., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

लेआउट एवं टाईपसेटिंग
राजकान्ती गुप्ता, जी.ई.ए.जी.

छपाई
कस्तूरी ऑफसेट, गोरखपुर

आवरण फोटो
जी.ई.ए.जी.

लीज़ा पत्रिका के अन्य सम्पादन
लैटिन, अमेरिकन, पश्चिमी अफ्रीकन एवं ब्राज़ीलियन संस्करण

लीज़ा इण्डिया पत्रिका के अन्य क्षेत्रीय सम्पादन
तमिल, कन्नड़, उड़िया, तेलगू, मराठी एवं पंजाबी

सम्पादक की ओर से लेखों में प्रकाशित जानकारी के प्रति पूरी सावधानी बरती गई है। फिर भी दी गई जानकारी से सम्बन्धित किसी भी त्रुटि की जिम्मेदारी उस लेख के लेखक की होगी।

माइजेरियर के सहयोग एवं जी०ई०ए०जी० के समन्वयन में ए०एम०ई० द्वारा प्रकाशित

लीज़ा

कम बाहरी लागत एवं स्थायी कृषि पर आधारित लीजा उन सभी किसानों के लिए एक तकनीक और सामाजिक विकल्प है, जो पर्यावरण सम्मत विधि से अपनी उपज व आय बढ़ाना चाहते हैं क्योंकि लीज़ा के अन्तर्गत मुख्यतः स्थानीय संसाधनों और प्राकृतिक तरीकों को अपनाया जाता है और आवश्यकतानुसार ही बाह्य संसाधनों का सुरक्षित उपयोग किया जाता है।

लीज़ा पारम्परिक और वैज्ञानिक ज्ञान का संयोग है, जो विकास के लिए आवश्यक वातावरण तैयार करता है। यह भी मुख्य है कि इसके द्वारा किसानों की क्षमता को विभिन्न तकनीकों से मजबूत किया जाता है और खेती को बदलती जरूरतों और स्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है, साथ ही उन महिला एवं पुरुष किसानों व समुदायों का सशक्तिकरण होता है, जो अपने ज्ञान, तरीकों, मूल्यों, संस्कृति और संस्थानों के आधार पर अपना भविष्य बनाना चाहते हैं।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन, डक्कन के अर्द्धशुष्क क्षेत्र के लघु सीमान्त किसानों के बीच विकास एजेन्सियों के जुड़ाव, अनुभव के प्रसार, ज्ञानवर्द्धन एवं विभिन्न कृषि विकल्पों की उत्पत्ति द्वारा पर्यावरणीय कृषि को प्रोत्साहित करता है। यह कम लागत प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन के लिए पारम्परिक ज्ञान व नवीन तकनीकों के सम्मिश्रण से आजीविका स्थाईत्व को बढ़ावा देता है।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन गांव में इच्छुक किसानों के समूह को वैकल्पिक कृषि पद्धति तैयार करने व अपनाने में सक्षम बनाने हेतु उनके साथ जुड़कर सघन रूप से काम कर रही है। यह स्थान अभ्यासकर्ताओं व प्रोत्साहकों के लिए उनको देखने–समझने की क्षमता में वृद्धि करने हेतु सीखने की परिस्थिति के तौर पर है। इससे जुड़ी स्वयं सेवी संस्थाओं और उनके नेटवर्क को जानने के लिए इसकी वेबसाईट देखें–www.amefound.org

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप एक स्वैच्छिक संगठन है, जो स्थाई विकास और पर्यावरण से जुड़े मुद्दों पर सन् 1975 से काम कर रहा है। संस्था लघु एवं सीमान्त किसानों, आजीविका से जुड़े सवालों, पर्यावरणीय संतुलन, लैंगिक समानता तथा सहभागी प्रयास के सिद्वान्तों पर सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। संस्था ने अपने 30 साल के लम्बे सफर के दौरान अनेक मूल्यांकनों, अध्ययनों तथा महत्वपूर्ण शोधों को संचालित किया है। इसके अलावा अनेक संस्थाओं, महिला किसानों तथा सरकारी विभागों का आजीविका और स्थाई विकास से सम्बन्धित मुद्दों पर क्षमतावर्धन भी किया है। आज जी0ई0ए0जी0 ने स्थाई कृषि, सहभागी प्रयास तथा जेण्डर जैसे विषयों पर पूरे उत्तर भारत में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है।

माइजेरियर वर्ष 1958 में स्थापित जर्मन कैथोलिक बिशप की संस्था है, जिसका गठन विकासात्मक सहयोग के लिए हुआ था। पिछले 50 वर्षों से माइजेरियर अफ्रीका, एशिया और लातिन अमेरिका में गरीबी के विरूद्ध लड़ने के लिए प्रतिबद्ध है। जाति, धर्म व लिंग भेद से परे किसी भी मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यह हमेशा तत्पर है। माइजेरियर गरीबी और हानियों के विरूद्ध पहल करने के लिए प्रेरित करने में विश्वास रखता है। यह अपने स्थानीय सहयोगियों, चर्च आधारित संगठनों, गैर सरकारी संगठनों, सामाजिक आन्दोलनों और शोध संस्थानों के साथ काम करने को प्राथमिकता देता है। लाभार्थियों और सहयोगी संस्थाओं को एक साथ लेकर यह स्थानीय विकासात्मक क्रियाओं को साकार करने और परियोजनाओं को क्रियान्वित करने में सहयोग करता है। यह जानने के लिए कि स्थिर चुनौतियों की प्रतिक्रिया में माइजेरियर किस प्रकार अपनी सहयोगी संस्थाओं के साथ काम कर रहा है। इसकी वेबसाइट देखें (www.misereor.de; www.misereor.org)

लाखों लोगों को सुरक्षित भोजन उपलब्ध कराने के साथ मिट्टी की सेहत सुधारना

दीपक सुचडे एवं ओम पी0 रूपेला

अमृत मिट्टी के नाम से तैयार एक अभिनव खाद का उपयोग कर बहुत से किसान मृदा को उसका जीवन वापस लौटा रहे हैं। बिना किसी बाहरी रसायनिक निवेश के कार्बनिक पदार्थों का उपयोग करते हुए ये किसान अपने खेतों को समृद्ध बना रहे हैं और स्थानीय एवं प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करते हुए विविध प्रकार के पोषक तत्वों से युक्त खाद्य का उत्पादन कर रहे हैं।

नया जीवन प्रदान करती पारम्परिक वर्षा जल संग्रहण प्रणाली

रवदीप कौर, प्रफुल्ल बेहरा एवं अपर्णा दत्त

स्थाई कृषि खेती से होने वाली आमदनी एवं आजीविका के लिए जल संसाधनों का प्रभावी प्रबन्धन महत्वपूर्ण है। पारम्परिक वर्षा जल संग्रहण ढांचों जैसे खादिन एवं नादी के पुनर्निर्माण के माध्यम से, बाड़मेर के किसानों ने न्यूनतम वार्षिक वर्षा 200–250 मिमी0 होने पर भी वर्षा सिंचित खेती से आगे जाकर खेती की है और खाद्य सुरक्षा में योगदान करने के साथ–साथ लोगों के जीवनस्तर को भी उन्नत बनाने में योगदान दिया है।

छोटे प्रयास से बड़ी सफलता

राम कुमार सिंह

असमतल, परती जमीन को सरकारी योजनाओं से जोड़कर खेती योग्य बनाते हुए छोटे व सीमान्त किसानों द्वारा अपनी आजीविका सुनिश्चित की जा सकती है। इसे बुन्देलखण्ड के सलारपुर गांव के किसानों ने सिद्ध किया है, जहां उन्होंने मनरेगा योजना से जुड़ाव स्थापित कर अपने खेत में तालाब निर्माण कर न सिर्फ अपनी खेती को सुरक्षित व सुनिश्चित किया, वरन् आस–पास के किसानों को सिंचाई हेतु किराये पर पानी देकर अतिरिक्त आमदनी भी प्राप्त की।

श्री पद्धति से महिलाओं के जीवन में आया बदलाव

साबरमती टिकी

वैश्विक रूप से देखा जाये तो लगभग 100 करोड़ लोग चावल की खेती से जुड़े हुए हैं और उनमें से लगभग आधी महिलाएं हैं, जो लगातार अपना काम किये जा रही हैं, इनमें से अधिकांश अपने हाथों में हंसिया आदि उठाये खेतों की तरफ नंगे पैरों जाती हैं। एक कृषि पारिस्थितिक माध्यम श्री विधि महिलाओं के शरीर पर लदे काम के इस बोझ को कम कर सकती है।

अनुक्रमणिका

विशेष हिन्दी संस्करण, जून 2016

5 लाखों लोगों को सुरक्षित भोजन उपलब्ध कराने के साथ मिट्टी की सेहत सुधारना
दीपक सुचडे एवं ओम पी0 रूपेला

10 नया जीवन प्रदान करती पारम्परिक वर्षा जल संग्रहण प्रणाली
रवदीप कौर, प्रफुल्ल बेहरा एवं अपर्णा दत्त

13 छोटे प्रयास से बड़ी सफलता
राम कुमार सिंह

14 श्री पद्धति से महिलाओं के जीवन में आया बदलाव
साबरमती टिकी

18 सामुदायिक सहयोग से खाद्य असुरक्षा को चुनौती
टी.के. ओमना

सामुदायिक सहयोग से खाद्य असुरक्षा को चुनौती

टी0के0 ओमना

महिलाओं की क्षमता एवं आत्मविश्वास बढ़ाकर, उनके अन्दर मौजूद दक्षता का उपयोग कर तथा पुनर्चक्रीकरण के माध्यम से कृषि आधारित गतिविधियों के लिए आवश्यक एवं एकीकृत सभी गतिविधियों के लिए सहयोग प्रदान कर महिलाओं को सशक्त बनाते हुए केरल की गरीब महिलाओं की गरीबी के दलदल से बाहर निकालने में सहयोग मिला है।

यह अंक...

प्रचण्ड गर्मियों के दिन और चिलचिलाती धूप, इन्हीं मौसमी परिस्थितियों में लीज़ा जून, 2016 का हिन्दी अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। एक तरफ गर्मी दिन–प्रतिदिन और वर्ष–दर वर्ष बढ़ती जा रही है, तो दूसरी तरफ पानी का स्तर भी दिनोंदिन घटता जा रहा है, ऐसी स्थिति में पानी का संरक्षण न सिर्फ खेती बचाने के लिए आवश्यक है, वरन् जीवन बचाने के लिए भी एक पहल है। इस अंक में किसानों ने व्यक्तिगत रूप से खेती को बचाने के लिए जल संरक्षण गतिविधियों को अपनाया है, तो स्थानीय स्तर पर स्वैच्छिक संगठनों ने जल बचाने के लिए संरक्षण की सामूहिक गतिविधियों को सामुदायिक संगठनों के माध्यम से बढ़ावा दिया है।

पत्रिका का पहला लेख दीपक सुचदे एवं ओम पी0 रूपेला द्वारा लिखित ''लाखों लोगों को सुरक्षित भोजन उपलब्ध कराने के साथ मिट्टी की सेहत सुधारना'' है। इस लेख में लेखक द्वय ने जैविक खाद एवं कीटनाशकों के प्रयोग तथा प्राकृतिक संसाधनों के बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग से मिट्टी को उर्वरा एवं पोषण युक्त बनाने की बात की है, तो रवदीप कौर, प्रफुल्ल बेहरा एवं अपर्णा दत्त द्वारा लिखित दूसरे लेख ''नया जीवन प्रदान करती पारम्परिक वर्षा जल संग्रहण प्रणाली'' में राजस्थान के बाडमेर जिले में पारम्परिक जल संग्रहण प्रणालियों को स्थानीय स्वैच्छिक संगठनों के सहयोग से नया जीवन प्रदान करते हुए ग्रामीणों ने न सिर्फ खेतों के लिए जल उपलब्धता सुनिश्चित की, वरन् पेयजल के लिए भी सुरक्षित स्रोत तलाशे हैं। पत्रिका के तीसरा लेख ''श्री पद्धति से महिलाओं के जीवन में आया बदलाव'' श्री पद्धति से खेती करने के लाभों पर आधारित है। इस लेख में यह बताया गया है कि श्री पद्धति में थोड़ा सा तकनीक का मिश्रण करने से न सिर्फ खेती की लागत कम होती है, वरन् उपज भी अच्छी मिलती है और महिलाओं को शारीरिक श्रम से कुछ हद तक राहत भी मिलती है।

चौथा लेख श्री रामकुमार सिंह द्वारा लिखित ''छोटे प्रयास से बड़ी सफलता'' है। जी0ई0ए0जी0 के स्थानीय अनुभवों पर आधारित यह लेख सरकारी योजनाओं के जुड़ाव से सीमान्त किसानों की सफलता एवं आजीविका स्थाईत्व को दर्शाता है। जबकि ''सामुदायिक सहयोग से खाद्य सुरक्षा को चुनौती'' शीर्षक से अन्तिम व पांचवा लेख केरल की महिलाओं द्वारा पारम्परिक गतिविधियों के माध्यम से खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के प्रयासों को दर्शाता है। यह लेख श्री टी0के0 ओमना द्वारा लिखित है।

अन्त में विभिन्न विषयों पर आधारित यह पत्रिका आपके समक्ष बहुमूल्य विचारों एवं सुझावों हेतु प्रस्तुत है।

• **सम्पादक मण्डल**

लाखों लोगों को सुरक्षित भोजन उपलब्ध कराने के साथ मिट्टी की सेहत सुधारना

दीपक सुचडे एवं ओम पी० रूपेला

अमृत मिट्टी के नाम से तैयार एक अभिनव खाद का उपयोग कर बहुत से किसान मृदा को उसका जीवन वापस लौटा रहे हैं। बिना किसी बाहरी रसायनिक निवेश के कार्बनिक पदार्थों का उपयोग करते हुए ये किसान अपने खेतों को समृद्ध बना रहे हैं और स्थानीय एवं प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करते हुए विविध प्रकार के पोषक तत्वों से युक्त खाद्य का उत्पादन कर रहे हैं।

मृदा में पौधों के संतुलित विकास के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्वों (कम से कम 30) का विशाल भंडार है। लेकिन इनमें से बहुत से तत्व बंधे स्वरूप में हैं। टूटे हुए स्वरूप में केवल कुछ ही तत्व उपलब्ध हैं या फिर जल में घुलने के बाद ही ये उपयोग में आ सकते हैं जिस कारण पौधों की पहुंच से ये दूर होते हैं। पौधों के कुछ भागों को मनुष्य स्वयं उपभोग में लाता है और कुछ भाग पौधों के चारे के रूप में प्रयुक्त करता है अथवा फसल कटाई के बाद उसके अवशेषों को जला देते हैं। यद्यपि कि यह उचित नहीं है, लेकिन यदि कुछ पौधों के अवशेषों को मृदा के भोजन के लिए छोड़ दिया जाए और मृदा जीवाश्म को बनाते एवं प्रबन्धित रखते हैं, तो मृदा स्वयं से अपने लाखों सूक्ष्म जीवाणुओं, सूक्ष्म जीवों एवं अन्य जीवाश्मों (मृदा जीवन या जीव तत्व) की देख–भाल कर अपने–आपको फिर से जीवन्त बना सकता है। मिट्टी में पौधों के जैव–तत्व के मिश्रण से जीव–तत्व को उनका भोजन प्राप्त होता है, और पौधों में पोषण के रूप में दिन–प्रतिदिन उपयोग हेतु प्रकिया तेज होती है। एक मग (भारत में जिसका बहुतायत में उपयोग नहाने के लिए किया जाता है) स्वस्थ वन की मिट्टी में लगभग 2000 करोड़ बैक्टीरिया, 20 करोड़ प्रोटोजोआ, एक लाख मीटर फंगी, 1 लाख नीमाटोड्स एवं 50 हजार आर्थोपोड्स (सेण्टीपेड्स, मिलीपेड्स, कीड़े एवं मकड़ियां) हो सकती हैं। यह माना जाता है कि स्वस्थ मृदा में जीवाश्म नमी के रूप में रहती है, जो कि महासागरों के बाद दूसरा सबसे बड़ा प्राकृतिक जलस्रोत होता है। यदि

> जिस प्रकार एक बच्चा अपनी मां के गर्भ में गर्मी पाकर पलता है ठीक उसी प्रकार माइक्रोब्स एवं पौधों के रूप में मिट्टी में जीवन रहता है। मनुष्यों और पशुओं के विपरीत मिट्टी अधिक दिनों तक अपने बच्चों का पोषण करती है।

बाक्स 1 : नटूको पद्धति

नटूको विज्ञान का प्रतिपादन स्वर्गीय प्रोफेसर श्रीपद ए. दाभोलकर द्वारा किया गया है और यह दो शब्दों नेचुरल यानि प्राकृतिक और इकालाजिकल यानि पारिस्थितिकी से मिलकर बना है। नटूको खेती वास्तव में खेती की एक ऐसी संस्कृति है, जो एक खेत की पारिस्थितिकी और उत्पादन को मजबूती प्रदान करने के लिए महत्वपूर्ण वैज्ञानिक पद्धतियों से प्रकृति के निरीक्षण, उसे समझने एवं उसके साथ समन्वयन पर आधारित है। यह खेती के विशिष्ट मुद्दों जैसे प्रकृति पर बिना बोझ डाले सहयोग लेते, खेती के लिए बाहरी निवेशों पर अपनी निर्भरता कम करते, वैज्ञानिक तरीके से काम करने और अपने खेत के चारों तरफ फैले स्थानीय संसाधनों का उपयोग करते हुए खेती करें, खेत की पारिस्थितिकी को नुकसान पहुंचाये बिना कैसे खेती करने आदि के ऊपर काम करता है ताकि किसानों को बिना किसी नुकसान के उच्च उत्पादकता मिलती रहे। नटूको संस्कृति की यही विशेषता इसे ''जैविक खेती'' के अन्य दूसरे स्वरूपों से अलग करती है।

इस जीवाश्म की मात्रा कम हो जाये तो पौधों के विकास के लिए मृदा को जल सहित सभी बाहरी निवेशों की अतिरिक्त आवश्यकता होगी, जिससे खेती के स्थाईत्व का चक्र टूटना प्रारम्भ हो जायेगा।

नटूको खेती

आज की खाद्य एवं खेती की आवश्यकता को पूरा करने के लिए नाटूको खेती पद्धति एक समग्र खेती पद्धति है। आर्थिक लाभ के संकुचित दायरे से बाहर आकर इस पद्धति का उद्देश्य कार्बन या बायोमॉस को बढ़ाना है। ऊर्जा के सन्दर्भ में यह न्यूनतम निवेश के साथ अधिकतम प्राप्ति की बात भी करता है। नटूको अवधारणा में मौलिक विश्वास प्रणाली यह है कि यह ''जीवन का एक विज्ञान है और जीवन ही ऊर्जा है।'' नटूको केवल खेती के बारे में नहीं है और निश्चित रूप से खेती सिर्फ उत्पादन एवं वितरण के लिए नहीं है। यह एक जीवनशैली है (बाक्स 1 देखें)

अमृत मिट्टी नटूको खेती का एक महत्वपूर्ण तत्व है, जिसे हम 'नर्सरी' मिट्टी, 'मसाला मिट्टी' या 'जीवित मृदा' भी कहते हैं। अमृत मिट्टी खाद का एक रूप है, जो उर्वर मृदा तैयार करने के नटूको प्रक्रिया के आधार पर तैयार की जाती है। जहां प्रकृति उर्वर मृदा को तैयार करने में सदियों का समय लेती है, वहां एक किसान इस मृदा को अपने खेत में अमृत मिट्टी के रूप में पांच माह से भी कम समय में तैयार कर सकता है (बाक्स 2 देखें)। यह मनुष्यों की सकारात्मक सहभागिता के माध्यम से प्रकृति के समय चक्र को कम करते हुए प्रकृति में ऊपरी मृदा तैयार करने की प्रक्रिया में तेजी लाती है। अमृत मिट्टी में जीवित जीवाश्म, समुचित नमी और हवा सहित एक विशिष्ट उर्वर मृदा के सभी गुण रहते हैं।

फसल उगाने की इस नटूको खेती तकनीक की मुख्य विशेषता– (अ) बिना जुताई के, मल्चिंग करते हुए अमृत मिट्टी के छोटे से ढेर पर पौधों को उगाया जा सकता है। (ब) मिट्टी का ढेर हमेशा नमीयुक्त बना रहता है (इसमें 1000 लीटर प्रति दिन प्रति गुण्टा की दर से पानी की उपलब्धता रहती है।) (स) आवश्यकता के आधार पर फसलों की खेती एवं कटाई की जाती है। समग्र रूप में यह एक ''निर्मित वन'' की तरह दिखता है। (द) कृषि रसायनों के सन्दर्भ में उर्वरक, कीटनाशकों आदि किसी भी तरह के बाहरी निवेशों की आवश्यकता नहीं पड़ती है। (य) यहां तक कि फूल आने के समय भी खेतों में घास उगने दिया जाता है और इसे एक संसाधन के रूप में देखते हैं। (र) जमीन के एक छोटे से टुकड़े पर अधिक विविधतापूर्ण फसलें ली जा सकती हैं। 10 गुण्टा खेत में एक वर्ष में 125 तरह की फसल प्रजातियों की मिश्रित खेती की जा रही है। (ल) वर्षा जल संग्रहण के लिए खेत के चारों तरफ खाई खोद दी जाती है। (व) बहुत से उद्देश्यों की प्राप्ति करने के लिए प्रत्येक खेत के चारों तरफ जीवित चहारदीवारी तैयार की जाती है।

परीक्षण एवं विस्तार

वर्ष 2005 में, युसूफ मेहारेली केन्द्र, जिला पंवेल, महाराष्ट्र में तथा वर्ष 2006 से लेकर अब तक मध्यप्रदेश के देवास जिले में स्थित बजवादा गांव में कुर्सी तीर्थ खेत के 10 गुण्टा (40 गुण्टा में एक एकड़ होता है) परिक्षेत्र के दो टुकड़ों पर एक प्रयोग किया गया। यह दृढ़ता से विश्वास किया जाता था कि नटूको खेती पद्धति का उपयोग कर 10 गुण्टा खेत से न केवल चार सदस्यीय परिवार के लिए पूरे वर्ष भर खाद्य उपलब्धता सुनिश्चित होगी, वरन् अतिरिक्त उपज को बेचकर अन्य कामों को भी आसानी से किया जा सकेगा।

खेत के इस छोटे से टुकड़े से होने वाले उच्च उत्पादकता को देखते हुए देश भर के बहुत से किसान नटूको खेती पद्धति को अपनाने हेतु उत्सुक हुए। आज भारत के विभिन्न भागों में विविध पृष्ठभूमि वाले बहुत से किसानों द्वारा नटूको खेती पद्धति अपनाई जा रही है (बाक्स 3 देखें)। कुर्सी तीर्थ, बजवाड़ा द्वारा समय–समय पर आयोजित प्रशिक्षणों एवं कार्यशालाओं में सहभागिता कर इच्छुक किसान

बाक्स 2 : अमृत मिट्टी की तैयारी

अमृत जल की तैयारी : 10 लीटर पानी में, 1 लीटर गाय का मूत्र, 1 किग्रा गाय का ताजा गोबर एवं 50 ग्रा0 सुर्ती की गांठ मिलाये। इस तैयार मिश्रण को तीन दिनों तक रखें। प्रतिदिन इस मिश्रण को दो से तीन बार चलाते हैं एवं प्रत्येक बार 12 बार घड़ी की दिशा में एवं 12 बार घड़ी की उल्टी दिशा में चलायें। चौथे दिन गाढ़ा मिश्रण तैयार हो जायेगा। इस तैयार गाढ़े मिश्रण में 10 गुना पानी मिला लें।

↓

अमृत मिट्टी की तैयारी : हरी एवं सूखी पत्तियों तथा अन्य पौध अवशेषों को एकत्र कर लें। इन्हें तब तक सूखने दिया जाये, जब तक कि यह आसानी से टूट न जायें। तत्पश्चात् एक कण्टेनर या उसी जैसे किसी बर्तन में भरे अमृत जल में इसे मिला दें और इसी अवस्था में 24 घण्टों के लिए छोड़ दें।

↓

बेड की तैयारी (लम्बाई 10 फीट, चौड़ाई 3 फीट एवं लम्बाई 1 फीट)

चयनित क्षेत्र पर इस गीले बायोमास की पहली परत बिछा देते हैं। इसके ऊपर मृदा की एक पतली परत डालते हैं। 1 फीट की उंचाई तक पहले बायोमॉस, फिर मृदा की पतली परत बिछाने की यही प्रक्रिया बार–बार दुहराते हैं। ऐसा तब तक करते हैं जब तक कि बेड 1 फीट ऊंचा न हो जाये। प्रत्येक परत बिछाने के बाद उसे पैरों से खूब कसकर दबा देते हैं। बेड तैयार करने के बाद, इसके ऊपर पौधों के अवशेष को बिछा कर खाद बनने हेतु छोड़ देते हैं।

↓

30 दिनों के लिए पहली कम्पोस्टिंग : प्रत्येक सातवें दिन गढ्ढे को मिलाते हैं। प्रत्येक बार मिलाने के बाद उस पर मल्चिंग अवश्य करते हैं। गढ्ढे की नमी बनाये रखने तथा जीवाणु गतिविधियां सही से संचालित होने के लिए उस पर समय–समय पर अमृत जल से छिड़काव करते रहते हैं। मौसम एवं पत्तियों के प्रकार के आधार पर लगभग 30 दिनों के बाद इससे खाद मिलने लगती है।

↓

इस बेड पर विभिन्न रूचि के आधार पर पौधों जैसे टमाटर, मीठी सौंफ, इमली, गाजर, अम्बादी, पुदीना, तीखी मिर्ची, पालक, करेला, मेथी आदि की नर्सरी तैयार की जाती है। (नोट : बुवाई के पहले इन सभी पौध प्रजातियों के बीजों को शोधित करने के लिए अमृत जल में 8 घण्टे के लिए भिगो देते हैं। पौधों के बायोमॉस को मिलाकर उसे नम बनाये रखने तथा अंकुरित करने हेतु समय–समय पर अमृत जल का छिड़काव करते रहते हैं। बीज के अंकुरित होने के बाद 21 दिन तक इस प्रक्रिया को दुहराया जाना चाहिए।)

↓

21 दिन के बाद पहली छंटाई की जाती है। जब 25 प्रतिशत नर्सरी रोपाई के लिए तैयार हो जाती है।

↓

42 दिनों के बाद दूसरी छंटाई की जाती है। इस समय तक लगभग 25 प्रतिशत नर्सरी बड़े पौधों के रूप में बदल जाती है।

↓

63 दिन पर फूल आने की अवस्था में तीसरी बार छंटाई की जाती है। लगभग सभी पौधों की छंटाई हो जाती है। बिना जड़ों को नुकसान पहुंचाये बेड के ऊपर आधा इंच तना छोड़ देते हैं। 3–4 दिनों तक इस कटिंग किये पौधों को सूखने देते हैं। पूरी तरह सूख जाने के पश्चात् बेहतर मिश्रण के लिए इन्हें खूब अच्छी तरह से तोड़कर अमृत जल में मिलाकर 8 घण्टों के लिए रख देते हैं। तत्पश्चात् इस मिश्रण को फिर से घूर में मिलाते हैं। मिश्रणयुक्त घूर में पौध बायोमॉस मिलाते हैं और फिर से खाद तैयार हो गयी।

↓

दूसरी बार खादः हरी पौध–पत्तियों से तैयार घूर गढ्ढे को 30 दिनों तक खाद बनने के लिए रख देते हैं। प्रत्येक 7वें दिन घूर को मिलाने के बाद उस पर मल्चिंग करते हैं। गढ्ढे की नमी बनाये रखने के लिए तथा जीवाणुओं के क्रियाशील रहने के लिए इस पर समय–समय पर अमृत जल का छिड़काव करते रहते हैं। 30 दिनों के बाद, पोषण युक्त जीवित मृदा, अर्थात् अमृत मिट्टी तैयार हो जाती है। अमृत मिट्टी को पौधों के बायोमॉस के साथ मिलाकर रखते हैं।

↓

इसमें जादुई स्पर्श भी शामिल है, (आपका जादुई स्पर्श (सकारात्मक सोच, स्नेह एवं प्यार)= अमृत मिट्टी में सकारात्मक ऊर्जा)

अमृत मिट्टी अब उपयोग के लिए तैयार है।

नटूको खेती पद्धति के बारे में अपनी समझ विकसित कर रहे हैं। यहां यह संज्ञान में लाना जरूरी है कि इस पद्धति में न तो ट्रैक्टर से और न ही बैलों से अर्थात् किसी भी तरह की जुताई की आवश्यकता नहीं पड़ती, इसलिए यह छोटी जोत के किसानों के लिए अधिक उपयोगी एवं प्रासंगिक है। इसके साथ ही यदि खेत में एक बार भी अमृत मिट्टी

डाल दी जाये तो जीवन–पर्यन्त अच्छी कृषिगत गतिविधियों जैसे – सतही मल्चिंग, फसल अवशेषों का पुनर्चक्रीकरण, वृक्षों सहित बहुस्तरीय खेती आदि के लिए बेहतर खेत मिलता रहेगा और समय बीतने के साथ उत्पादकता घटने के बजाय बढ़ेगी।

कुछ परिणाम, कुछ प्रभाव

अमृत मिट्टी में सूक्ष्म एवं अतिसूक्ष्म जीव बड़ी संख्या में शामिल हैं। बिना रसायनों के उच्च उत्पादकता पाने के लिए इस मिट्टी का उपयोग उसी तरह से किया जाता है, जिस प्रकार दूध से दही जमाने के लिए जोरन का उपयोग किया जाता है। ऊपरी सतह पर मल्चिंग के साथ–साथ इसका उपयोग करने से मृदा में जीवन उत्पन्न करने के लिए अनुकूल वातावरण मिलता है। और इसके साथ, यह ''मृदा भोजन वेब'' के रूप में क्रियाशील रहता है, जिससे पौधों के विकास के लिए सभी तरह के विविध पोषक तत्व धीरे–धीरे मिलते रहते हैं। अमृत मिट्टी को विभिन्न प्रयोगशालाओं में विश्लेषित किया गया और परिणाम बेहद चौंकाने वाले रहे। उदाहरण के लिए, आईसीआरआईएस एटी में परीक्षण किया गया, जिसमें पता चला कि दूसरे समीपवर्ती बंजर खेतों की तुलना में पौधों के नीचे वाली इस मिट्टी में जैविक कार्बन 2.61 प्रतिशत अर्थात 3 गुना अधिक था। सूक्ष्म जीवाणुओं की उपस्थिति के कारण उक्त मृदा में वैरोन 8 गुना, गंधक 2.64 गुना, लौह 1.5 गुना तथा जस्ता 7.3 गुना संदर्भित मृदा से अधिक पाया गया। इन तत्वों के साथ ही, सूक्ष्म बायोमॉस सी, सूक्ष्म बायोमॉस एन एवं डिहाइड्रोजनेज भी बहुत अधिक मात्रा में पाया गया, जिससे यह स्पष्ट होता है कि इस नटूको मिट्टी में सूक्ष्म जीवाणुओं की बड़ी संख्या मौजूद है। 100 से अधिक नमूनों की जांच में यह पाया गया कि इस मिट्टी खाद के एक ग्राम में पौधों के विकास के लिए 10 करोड़ से भी ज्यादा सूक्ष्म जीवाणु उपस्थित हैं। यह परिणाम आईसीआरआईएसएटी प्रयोगशाला में हुई बहुत सी जांचों में अन्य किसी भी खाद की तुलना में अभी तक का सबसे उच्चतम परिणाम है। यह अध्ययन यह भी दर्शाता है कि घूर विधि से अमृत मिट्टी का उपयोग करने पर आपस में एक–दूसरे से गूंथे हुए पोषक तत्व मृदा जीवन के कारण घुलनशील रूप में परिवर्तित हो जाते हैं।

अमृत मिट्टी का उपयोग किया जाने वाले क्षेत्र में प्रत्येक इकाई क्षेत्र की उत्पादकता बढ़ गयी है। (बाक्स 3 देखें) आम तौर पर कार्य शुरू करने के पहले ही वर्ष से उच्च उपज प्राप्त होने लगी है। जबकि अन्य दूसरे खेतों में जहां किसान दूसरे तरीके से जैविक खेती कर रहे हैं, वहां पर उन्होंने पहले वर्ष उपज में कमी दर्ज की, लेकिन तीसरे वर्ष से उन्हें उपज में वृद्धि मिलनी प्रारम्भ हुई। अमृत मिट्टी के प्रयोग से उत्पादकता में वृद्धि की यह सफलता पिछले कई वर्षों से लगातार दिख रही है।

मृत मिट्टी पर उगाई गयी सब्जियों का पोषण मूल्य उच्च है। विश्लेषण करने के दौरान बाजार से ली गयी एक

बाक्स 3 : नटूको खेती के कुछ उल्लेखनीय उदाहरण

किसान/खेत	फसल उपज
अरूणाचल, कोयम्बटूर, तमिलनाडु	चावल (बिना खेत में पानी लगे) 40 कु०/एकड़
दीपक सुचदे, बजवादा, मध्य प्रदेश	गेहूँ (30 कु०/एकड़) टमाटर (120 टन/एकड़) आलू (40 टन/एकड़)
डा० कटारिया, जामनगर गुजरात	मूँगफली (24कु०/एकड़)
सुरेश देसाई, बेदकीहाल, कर्नाटक	गन्ना (100 टन/एकड़)
भास्कर भाई सवे, उम्बेरगाँव, गुजरात	नारियल (400 फल/पेड़/ वार्षिक या परिपक्वता अवधि
बसुदेव कथे, नासिक, महाराष्ट्र	अंगूर (16 टन/एकड़)
जीत भाई कथे, कुटमुटिया, मालेगाँव, महाराष्ट्र	पपीता (180 एकड़/ वार्षिक)

अंकुरण के 21 दिन बाद के पौधे

बिना जुताई के पोषण प्रबन्धन करते हुए एक एकड़ में 38 कुन्तल गेहूँ की पैदावार हुई

लौकी की तुलना में एक नटूको खेत से प्राप्त लौकी में 5 गुना अधिक प्रोटीन एवं 20 प्रतिशत अधिक कैल्शियम के साथ ही मैग्नीशियम एवं लोहे की मात्रा भी पायी गयी। आश्चर्यजनक रूप से विश्लेषण के दौरान उसमें विटामिन बी12 की उपस्थिति भी मिली, जो कि सामान्यतः जानवरों एवं मृदा के सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा तैयार की जाती है न कि सब्जियों या पेड़ों से तैयार होती है। इसकी उपस्थिति का कारण यह है कि शायद लौकी के इस पौधे ने स्वस्थ मृदा से इस तत्व को ग्रहण कर लिया होगा। जबकि पारम्परिक रूप से उगाई जाने वाली सब्ज़ियों में पाये जाने वाले पोषण तत्वों में लगातार गिरावट आ रही है। पॉल बर्जनर द्वारा लिखित एक रिपोर्ट ''धातुओं के घाव भरने की शक्ति'' के अनुसार – 1914 में पालक में लौह की मात्रा 64 मिलीग्राम / 100 ग्राम थी, जो 1992 में घटकर 2.7 मिलीग्राम / 100 ग्राम हो गयी है।

निष्कर्ष

खाद्य सुरक्षा, पोषण एवं गरीबी के मुद्दों से निपटने के लिए, उपभोक्ताओं एवं पर्यावरण को बिना नुकसान पहुंचाये खाद्य उत्पादकता में वृद्धि करने की आवश्यकता है। स्थाई उच्च उत्पादन के लिए कृषि–पारिस्थितिकी प्रणाली के डिजाईन की नकल करते हुए प्राकृतिक पारिस्थितिकी प्रणाली को तैयार करने तथा कार्य करने की आवश्यकता है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु अमृत मिट्टी एक बेहतर रास्ता है, जिससे किसान को एक सम्मानजनक जीवन मिल सकता है।

हमारे किसानों विशेषकर छोटी जोत के किसानों की वर्तमान आर्थिक और सामाजिक स्थिति को सुधारने के लिए नटूको खेती और अमृत मिट्टी में अपार एवं अप्रयुक्त संभावनाएं हैं। विज्ञान जगत द्वारा नटूको प्रणाली जैसी पद्धति के माध्यम से पारिस्थितिक कृषि तंत्र की विकसित पद्धति के ऊपर अध्ययन, मूल्यांकन एवं शोध की भी अपार संभावनाएं हैं। आज आवश्यकता इस प्रकार की नीतियों की है, जो किसानों को पारम्परिक खेती से पारिस्थितिकी कृषि की ओर जाने हेतु प्रोत्साहित करे। बदलाव का यह रास्ता लम्बा अवश्य है, परन्तु लाखों लोगों की खाद्य सुरक्षा एवं स्वास्थ्य सुरक्षा के लिए बहुत ही लाभदायी होगा।

■

दीपक सुचदे
नटूको जीवन शैली किसान
मालपानी ट्रस्ट, ग्राम–बजवादा
पोस्ट– नेमावार 455339
खाटेगाँव, जिला देवास, मध्य प्रदेश
ई–मेल : deepaksuchde@gmail.com

ओम पी रूपेला
भूतपूर्व वैज्ञानिक, आईसीआरआईएसएटी
120, फेज 1, साकेत कापरा, पोस्ट– इसीआईएल
हैदराबाद 500062
ई–मेल : oprupela@gmail.com

Soils for life
LEISA INDIA, Vol. 17, No.1, March 2015

नया जीवन प्रदान करती पारम्परिक वर्षा जल संग्रहण प्रणाली

रवदीप कौर, प्रफुल्ल बेहरा एवं अपर्णा दत्त

स्थाई कृषि खेती से होने वाली आमदनी एवं आजीविका के लिए जल संसाधनों का प्रभावी प्रबन्धन महत्वपूर्ण है। पारम्परिक वर्षा जल संग्रहण ढांचों जैसे खादिन एवं नादी के पुनर्निर्माण के माध्यम से, बाड़मेर के किसानों ने न्यूनतम वार्षिक वर्षा 200–250 मिमी0 होने पर भी वर्षा सिंचित खेती से आगे जाकर खेती की है और खाद्य सुरक्षा में योगदान करने के साथ–साथ लोगों के जीवनस्तर को भी उन्नत बनाने में योगदान दिया है।

फोटो : लेखक

उतरलायी नादी में पहला वर्षा जल संरक्षण

पश्चिमी राजस्थान के पाकिस्तान सीमा पर स्थित बाडमेर जिला, विशाल भारतीय थार मरूस्थल का एक भाग है, जिसमें बहुतायत में रेत के टीले, बंजर छोटी पहाड़ियां और आबादी क्षेत्रों में कंटीली झाडियों वाली वनस्पतियां पायी जाती हैं। इन प्रतिकूल परिस्थितियों वाले रेगिस्तानी क्षेत्र के बाडमेर जिले की जनसंख्या 26 लाख (2011 की जनगणना के अनुसार) है, जिसमें से 93 %जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। यहां पर अति तीव्र गर्मी, धूल भरी आंधियां, कड़ाके की ठण्ड, सूखा एवं असमान मानसून की परिस्थितियों में कृषि प्रमुख व्यवसाय है, जिसमें 82 % से अधिक ग्रामीण जनसंख्या लगी हुई है व लगभग 80 % क्षेत्र वर्षा सिंचित कृषि के अन्तर्गत आता है।

गर्मियों के महीनों में, पीने के साथ ही, खेती के लिए भी पानी की उपलब्धता एक गम्भीर चिन्ता का विषय हो जाती है। जिले में औसतन 270–300 मिमी0 वर्षा ही होती है, जो सामान्यतः वर्ष के 15 दिनों में ही हो जाती है। यदि इन 15 दिनों में वर्षा जल को एकत्रित व सुरक्षित नहीं किया गया तो पूरे वर्ष भर के लिए पानी की उपलब्धता एक चुनौती बन जाती है। बाडमेर में पानी की प्रत्येक बूंद का महत्व होता है।

परम्परागत निपुणता

बाडमेर की एक मुख्य विशेषता यहां पर 500 वर्षों से अधिक समय से उपयोग में आने वाली परम्परागत वर्षा जल संग्रहण प्रणाली ''खादिन'' है। जैसलमेर के आस–पास रहने वाले पालीवाल ब्राम्हणों की एक शाखा द्वारा इसकी डिजाइन बनायी गयी थी। इस प्रणाली में, लगभग 300 मीटर का एक मिट्टी का बंधा वर्षा के बहते जल को एकत्रित करने के लिए बनाया गया। ''खादिन'' के द्वारा वर्षा के जल को एकत्रित कर उसका उपयोग फसलों के उत्पादन, भूमि को नम बनाये रखने तथा उसकी उर्वरता में अभिवृद्धि के लिए किया गया। इस डिजाइन में इस प्रकार की व्यवस्था की गयी कि अतिरिक्त वर्षा का जल नाली द्वारा बह जाये। ''खादिन'' प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन और कृषि के समन्वयन का एक बहुत ही पुराना उदाहरण है, जिसमें वर्षा के जल को रोक कर कृषि की उत्पादकता को बढ़ाने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार की बहुत सी संरचनाएं सदियों से उपेक्षित रही हैं या उनका प्रबन्धन बहुत ही खराब ढंग से किया गया।

बड़ी बाढ़

राजस्थान में, मौसम चक्र सामान्यतः इस प्रकार का है कि प्रति 3–4 वर्ष सूखा पड़ने के पश्चात् एक वर्ष अच्छे मानसून वाला होता है, लेकिन असाधारण बारिश और बाढ़ 75 या 100 वर्षों में एक बार आती है। अगस्त 2006 के अन्तिम सप्ताह में बाडमेर में 750 मिमी0 वर्षा हुई, जो कि जिले के औसत वार्षिक वर्षा के चार गुना के बराबर थी। अर्थात् चार वर्षों की औसत वार्षिक वर्षा मात्र एक ही सप्ताह में हो गयी। बाडमेर जिला एक झील बन गया और इसके उच्चावच के कारण यहां पर अचानक से 20 नये झील तालाब बन गये, जो शाब्दिक रूप से विशाल रेगिस्तान में जलीय क्षेत्र के रूप दिखाई देने लगे। कवास

> खादिन से लगभग 300 हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि की सिंचाई करने में सहायता मिली है।

और मलुआ गांव सर्वाधिक प्रभावित थे, जिसमें लगभग 200 व्यक्ति बाढ़ में मर गये व लोगों के घर 15 फीट गहरे जल में डूब गये थे। बाडमेर के खादिनों, टंकाओं एवं एनटिक आदि को बहुत नुकसान पहुंचा या ये बह गये। बाडमेर में जिप्सम धातु की भूमिगत सतह है, जिससे वर्षा का जल अन्दर नहीं जा पाता है, जिससे जल प्लावन बढ़ जाता है। ग्रामीणों ने जल संग्रहण क्षेत्रों को पुनः बहाल करने के लिए कठिन परिश्रम किया। गांव वालों के लिए बुरी खबर होते हुए भी, कई पर्यावरणविदों को लगा कि इस क्षेत्र के लिए बाढ़ एक वरदान हो सकता है, क्योंकि एक लम्बे समय में यहां का भूगर्भ जलस्तर ऊपर होगा। इस क्षेत्र में काम करने वाली तेल कम्पनियों के लिए भी यह चिन्ता का विषय नहीं था, क्योंकि विशेषज्ञों के मुताबिक जब बाढ़ का पानी नीचे रिसेगा तो उसके दबाव से तेल बाहर आयेगा।

बाडमेर उन्नति

केयर्न इण्डिया ने इस क्षेत्र में स्वास्थ्य, शिक्षा, दक्षता तथा स्थाई आजीविका के अवसरों व रोजगार की प्राप्ति के लिए क्षमता वृद्धि के प्रशिक्षणों के माध्यम से इस क्षेत्र के सम्पूर्ण सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए एक बड़ा कार्यक्रम संचालित किया। केयर्न ने बाडमेर के लगभग 140 गांवों में इस गतिविधि को अपनाया और प्रत्येक गांव के सभी परिवारों के समग्र विकास को अपना प्रमुख मुद्दा बनाया। अक्टूबर 2013 से केयर्न इण्डिया ने बाडमेर के किसानों के जीवन में बदलाव लाने के लिए कारपोरेट सामाजिक जिम्मेदारी कार्यक्रम को टेक्नोसर्व के सहयोग से प्रारम्भ किया। टेक्नोसर्व एक अलाभकारी संस्था है, जो भारत, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका में गरीबी उन्मूलन के लिए व्यवसाय विकसित करती है और वर्तमान समय में स्थानीय लोगों के आर्थिक विकास के लिए कृषि आधारित परियोजना बाडमेर उन्नति के अन्तर्गत बहुत सी गतिविधियां संचालित कर रही है। इस परियोजना का उद्देश्य कृषि उत्पादन तथा कृषि की उत्पादकता में सुधार व आगामी पांच वर्षों में दस हजार कृषक परिवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार कर स्थाई विकास करना है। संस्था ने कृषि आधारित हस्तक्षेपों, प्राकृतिक संसाधनों के प्रबन्धन, क्षमता अभिवृद्धि का मूल्यांकन तथा मानव संसाधन के स्थाई क्षमता अभिवृद्धि विशेष कर ग्रामीण युवकों को उद्यमी बना कर इस लक्ष्य को प्राप्त किया है।

जल संग्रहण – आजीविका की कुंजी

बाडमेर उन्नति का एक उल्लेखनीय घटक प्राकृतिक संसाधनों का प्रबन्धन है और परियोजना प्रारम्भ होने के दो वर्षों के भीतर ही इससे मिलने वाले परिणामों को देखते हुए परियोजना के तहत् प्राकृतिक संसाधनों के प्रबन्धन से सम्बन्धित गतिविधियां बड़े पैमाने पर संचालित की जा रही हैं। इस परियोजना के अन्तर्गत, पूरे जिले के अन्दर 1000 प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन संरचनाओं एवं इकाईयों की स्थापना या उनका पुनरूद्धार किया जायेगा।

दो वर्षों से भी कम समय में, स्थानीय संस्था ग्राविस एवं स्थानीय समुदायों के साथ मिलकर टेक्नोसर्व ने 155 प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन संरचनाओं की स्थापना की है। इसमें 150 लोगों के खेतों में व्यक्तिगत व 2 सामूहिक खादिन, 2 सामुदायिक नादियों का पुनरूद्धार किया गया और एक एस.पी.यू. (सिल्वी चारागाह इकाई) विकसित की गयी। इसके साथ ही नाबार्ड के साथ जुड़ाव स्थापित करते हुए 15 खादिन ढांचों का निर्माण भी कराया गया।

खादिन निर्माण से लाभान्वित किसान जोड़ा

फोटो : लेखक

भाग्य और जोश

जनवरी 2004 में यूनाइटेड किंगडम के केयर्न इनर्जी द्वारा बाडमेर के मंगला क्षेत्र में तेल का भण्डार खोजा गया। यह पिछले दो दशकों की अब तक की सबसे बड़ी खोज थी। इस सफलता के साथ बाडमेर की अर्थव्यवस्था में एक नया मोड़ आया। रातोंरात बाडमेर को जिला मुख्यालय बना दिया गया और ऊर्जा उद्योग को सहयोग देने के लिए त्वरित गति से सम्पत्तियों एवं बुनियादी सुविधाओं का विकास किया गया। आज राजस्थान ब्लाक में मंगला, भाग्यम और ऐश्वर्या क्षेत्र खोज के सबसे बड़े क्षेत्र हैं और देश की सबसे बड़ी आत्मनिर्भर तेल एवं गैस खोज कम्पनी केयर्न इण्डिया की सम्पत्ति के रूप में हैं। केयर्न इण्डिया भारत के कच्चे तेल उत्पादन में 27 प्रतिशत की हिस्सेदारी रखती है।

मार्च 2014 में बाडमेर उन्नति टीम ने एक किसान चतुर सिंह के 2.8 हेक्टेयर खेत में एक खादिन का निर्माण किया। खादिन निर्माण की कुल लागत रू0 45000.00 में चतुर सिंह ने मजदूरी कर रू0 12000.00 का योगदान दिया। खादिन निर्माण की असली लागत तब वसूल हुई, जब कुछ ही महीनों बाद मानसून अवधि में बाडमेर में सामान्य की तुलना में बहुत कम वर्षा हुई। पानी की कमी के कारण उस क्षेत्र के बहुत से किसानों की पूरी फसल बरबाद हो गयी। लेकिन खेत में निर्मित खादिन में 1000 क्यूबिक मीटर (लगभग 10 लाख लीटर) वर्षा जल संग्रहण के कारण चुतर सिंह ने बाजरा, मोथ सेम, मूंग एवं ग्वार की फसलें सफलतापूर्वक काटकर उन्हें घर में उपभोग किया, बेचा तथा अपने जानवरों के लिए चारा प्राप्त किया। बाडमेर में गम्भीर सूखे के बावजूद चतुर सिंह ने रू0 48396.00 की उपज अपने खेतों से प्राप्त की। प्रतिवर्ष मानसून आने से पहले खादिन का प्रबन्धन करते हुए चतुर सिंह कई वर्षों तक लाभ लेते हुए इसे एक महत्वपूर्ण और सार्थक निवेश के रूप में बनाये रखेंगे। चतुर सिंह की सफलता को देखते हुए आस–पास के किसान आगे आकर अपने खेतों में खादिन बनाने का अनुरोध कर रहे हैं। वर्ष 2014 के मानसून सत्र के दौरान अपने स्वयं के खेत पर खादिन का निर्माण कराये 37 किसानों ने बाजरा, ग्वार, मूंग, मोथ फसलों की खेती की और प्रत्येक किसान को रू0 20000.00 की अतिरिक्त आमदनी हुई। किसान इस बात पर बल देते हैं कि ''खेती करने हेतु प्रत्येक किसान के खेत में कम से कम दो हेक्टेयर परिक्षेत्र में खादिन का निर्माण होना चाहिए।'' जुलाई, 2015 में वर्षा सिंचित खेती पर आधारित 150 किसान लाभान्वित हुए और लगभग 300 हेक्टेयर खेत पर खेती की गयी।

दीर्घकालिक फायदे

बाडमेर उन्नति परियोजना के अन्तर्गत, अन्य पारम्परिक जल संग्रहण संरचनाओं जैसे ''नादी'' के पुनरूद्धार का भी काम किया गया। नादी (तालाब) आस–पास के गांवों के लिए पेयजल का एक प्रमुख स्रोत है, लेकिन पानी व तेज बारिश के साथ आने वाले बालू एवं पत्थरों से भर जाता था।

दो नादियों के पुनरूद्धार का कार्य पूरा हो चुका है और अब इन दो नादियों से आस–पास के 31 गांवों के लगभग 7000 परिवारों को लाभ होगा। उम्मीद की जाती है कि इन नादियों में वार्षिक तौर पर 4–5 वर्षा होने की स्थिति में लगभग 9 करोड़ लीटर पानी संग्रहित हो सकेगा। वर्तमान मानसून सत्र में, जून और जुलाई, 2015 में हुई प्रारम्भिक वर्षा के बाद लगभग 500 लाख लीटर पानी इन दो संरचनाओं में संग्रहित हो चुका है। समुदाय एवं परियोजना के सहयोग से पहले से दोगुनी क्षमता वाली ये संरचनाएं लगभग 15 वर्षों तक क्षेत्र को लाभ पहुंचायेंगी।

बाडमेर जिले के भदका गांव में एक सिल्वी चारागाह इकाई विकसित की गयी। गांव वालों एवं ग्राम पंचायत की सहमति के पश्चात् सामुदायिक जमीन के 16 एकड़ के परिक्षेत्र पर सिल्वी चारागाह इकाई विकसित की गयी, जिसपर लगभग 10000 पेड़ एवं स्थानीय प्रजातियों जैसे सेवन एवं धामन घास लगायी जायेंगी। यह इकाई जब एक बार पूर्णतया स्थापित हो जायेगी तब न इससे केवल जानवरों को पर्याप्त चारा मिलेगा, वरन् यह सामूहिक चराई भूमि के विकास एवं प्रबन्धन का एक माडल भी तैयार हो जायेगा। प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन गतिविधियों पर एक रणनीति के तहत् ध्यान केन्द्रित कर तथा बाडमेर के ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों के बीच जल संरक्षण के ऊपर जागरूकता एवं गतिविधियां आयोजित कर बाडमेर उन्नति परियोजना ने बहुत बेहतर प्रभाव छोड़ा है। स्थानीय लोगों की सहभागिता, विशषज्ञों की राय एवं विशेषज्ञता एवं क्षेत्र में किये गये अथक प्रयास ने अब यह सिद्ध कर दिया है कि वर्षा सिंचित खेती यहां तक कि न्यूनतम वार्षिक वर्षा 200–250 मिमी0 होने पर भी बाडमेर के लोग खेती कर सकेंगे और खाद्य सुरक्षा में अपना योगदान देते हुए अपना जीवनस्तर उन्नत कर सकेंगे।

■

रवदीप कौर एवं प्रफुल्ल बेहरा
मुख्य प्रोजेक्ट मैनेजर
बाडमेर में टेक्नोसर्व कार्यालय राजस्थान
ई–मेल : deepaksuchde@gmail.com

अपर्णा दत्त
संचार प्रमुख, टेक्नोसर्व इण्डिया
यूनिट–6, नीरू सिल्क मिल्स, मथुरा दास मिल कम्पाउण्ड
126 एन.एम. जोशी मार्ग, लोअर परेल, पश्चिम, मुम्बई– 400013
ई–मेल : adatta@tns.org, वेबसाईट : technoserve.org

Water lifeline for livelihoods
LEISA INDIA, Vol. 17, No.3, Sep. 2015

छोटे प्रयास से बड़ी सफलता

राम कुमार सिंह

असमतल, परती जमीन को सरकारी योजनाओं से जोड़कर खेती योग्य बनाते हुए छोटे व सीमान्त किसानों द्वारा अपनी आजीविका सुनिश्चित की जा सकती है। इसे बुन्देलखण्ड के सलारपुर गांव के किसानों ने सिद्ध किया है, जहां उन्होंने मनरेगा योजना से जुड़ाव स्थापित कर अपने खेत में तालाब निर्माण कर न सिर्फ अपनी खेती को सुरक्षित व सुनिश्चित किया, वरन् आस–पास के किसानों को सिंचाई हेतु किराये पर पानी देकर अतिरिक्त आमदनी भी प्राप्त की।

ग्रामीण क्षेत्रों में एक कहावत बहुत कही जाती है कि घूरे के भी दिन बहुरते हैं। इस कहावत को चरितार्थ किया – जनपद महोबा के ग्राम सलारपुर के किसान श्री रामकृपाल ने। जनपद मुख्यालय से लगभग 20 किमी0 की दूरी पर मध्यप्रदेश की सीमा से लगे ग्राम सलारपुर के निवासी श्री रामकृपाल पुत्र श्री मनुआ अनुसूचित जाति से सम्बद्ध हैं। इन दो भाइयों के बीच में केवल दो एकड़ ही जमीन थी, वह भी असमतल, ढालू तथा लाल कंकड़ वाली, जिस पर खेती करना लोहे के चने चबाना जैसा था। कोई भी फसल इस जमीन पर होती ही नहीं थी और किसान भी इसीलिए खेती से उदासीन थे।

रामकृपाल जमीन होते हुए भी भूमिहीन की तरह था और बंटाई पर खेती व मजदूरी कर अपना व अपने परिवार का पेट पालता था। यह कहानी सिर्फ रामकृपाल या उसके भाई की नहीं थी, बल्कि सलारपुर के 18 और किसानों की जमीन रामकृपाल की तरह परती, अनुपजाऊ थी और वे किसान दूसरों के खेत पर मजदूरी कर या पलायन कर अपना जीवन यापन करने पर मजबूर थे।

ऐसे ही समय में जी0ई0ए0जी0 के कार्यकर्त्ताओं ने क्रिश्चियन एड परियोजना के तहत् सघन खेती गतिविधियां संचालित करने हेतु सलारपुर गांव का चयन किया और स्थानीय परिस्थिति को देखते हुए जल संरक्षण गतिविधियों पर विशेश जोर दिया। इस गतिविधि के तहत् सबसे पहले श्री रामकृपाल के खेत पर 15 मी0 लम्बा, 15 मी0 चौड़ा व 3 मी0 गहरे तालाब की खुदाई की गयी तथा तालाब से निकले मिट्टी से खेत के समतलीकरण व मेड़बन्दी का कार्य किया गया। इस अभी दो तिहाई कार्य ही हुआ था कि वर्शा प्रारम्भ हो गयी और रामकृपाल के खेत का तालाब लबालब भर गया। इस वर्श किसान ने अपने खेत के कुछ भाग में तिल तथा उड़द की बुवाई की तथा शेश खेत मटका खाद डालकर रबी की फसल हेतु तैयार किया। खेत के तालाब से पहली सिंचाई कर रामकृपाल ने चना, गेंहूं तथा सरसों की बुवाई की और शेश पानी को किराये पर लेकर पड़ोसी श्री कालका पुत्र दुर्जन ने अपने 3 एकड़ खेत की सिंचाई की। अभी तक इस तालाब के पानी से 5.5 एकड़ खेत की सिंचाई हो चुकी है। चूंकि तालाब निर्माण व मेड़बन्दी के यह कार्य मनरेगा योजना के तहत् था, जिस पर स्वयं रामकृपाल ने अपने परिवार सहित काम किया था। इससे एक तरफ तो उसके खेत का सुधार हुआ तो दूसरी तरफ उसे अपने ही खेत पर काम करके रोजगार भी मिला। चना, सरसों व गेंहूं की फसल से प्राप्त उपज से किसान को अनुमानतः रू0 55000.00 की आमदनी हुई। इस सफलता को देखते हुए जी0ई0ए0जी0 कार्यकर्त्ताओं के सहयोग से ग्रामीणों ने ग्राम प्रधान से वार्ता कर अपने खेत में तालाब निर्माण व मेड़बन्दी के काम को आगामी मनरेगा ग्राम्य कार्य योजना में जोड़ने हेतु तैयार कर प्रस्ताव पारित कराया। इस प्रकार 18 किसानों के खेत की समतलीकरण, तालाब निर्माण व मेड़बन्दी का कार्य कराया गया।

इस प्रकार परती जमीन कृशि योग्य जमीन बन गयी और जिस जमीन की कीमत पिछले वर्श तक चालीस हजार रूपये प्रति एकड़ थी, अब उसकी कीमत डेढ़ से दो लाख रूपये प्रति एकड़ तक हो गयी है। मनरेगा के नोडल अधिकारी ने गांव का निरीक्षण किया तथा तालाब निर्माण एवं मेड़बन्दी के इस प्रयास को प्रशंसनीय बताते हुए कहा कि ऐसे छोटे–छोटे परन्तु सफल प्रयासों से किसान की तकदीर बदल सकती है।

■

राम कुमार सिंह
परियोजना अधिकारी
क्रिश्चियन एड परियोजना
गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप, गोरखपुर
ई–मेल : geagindia@gmail.com

श्री पद्धति से महिलाओं के जीवन में आया बदलाव

साबरमती टिकी

वैश्विक रूप से देखा जाये तो लगभग 100 करोड़ लोग चावल की खेती से जुड़े हुए हैं और उनमें से लगभग आधी महिलाएं हैं, जो लगातार अपना काम किये जा रही हैं, इनमें से अधिकांश अपने हाथों में हंसिया आदि उठाये खेतों की तरफ नंगे पैरों जाती हैं। एक कृषि पारिस्थितिक माध्यम श्री विधि महिलाओं के शरीर पर लदे काम के इस बोझ को कम कर सकती है।

रोपाई हेतु पौधों को नर्सरी से उखाड़ कर मुख्य खेत पर जाती महिला

मैं चावल खाकर बड़ी हुई हूँ और चावल की संस्कृति और कृषि का अनुभव मुझे बचपन से ही है। मैंने देखा है कि किस प्रकार किसान/मजदूर, उनमें भी ज्यादातर महिलाएं गर्मियों, घनघोर बारिश एवं गला देने वाली सर्दियों में अन्य बहुत से कामों के साथ दिन–दिन भर कमर झुका कर हाड़तोड़ मेहनत करती हैं। ''चावल महिलाओं की पीठों पर उगता है'' इस कहावत को चरितार्थ करती हुई महिलाएं चावल उगाने में 27 से 84 प्रतिशत श्रम उपलब्ध कराती हैं, जिनका न तो कोई दाम होता है और न ही उस श्रम की कोई गिनती होती है।

जी–जान से अन्य निवेशों को तैयार करने के कामों में लगे रहने वाले श्रमिक ही वास्तविक उत्प्रेरक होते हैं। दुर्भाग्य से, समय के साथ उनकी यह पूंजी बढ़ने के स्थान पर घटती जाती है। वैश्विक रूप से, पूरी दुनिया में लगभग 100 करोड़ लोग चावल उत्पादन के कामों में लगे हुए हैं और उनमें 50 करोड़ महिलाएं हैं, जो हमें भोजन उपलब्ध कराने के लिए अपना शारीरिक श्रम लगाती हैं। 50 करोड़ एवं इस विशाल आबादी की आधी से अधिक महिलाएं किसी न किसी तकनीक से जुड़ी हुई एवं उससे प्रभावित हैं। फिर भी अभी तक, सदियों से चावल की खेती में उनके द्वारा किये जाने वाले श्रम की प्रकृति अनिवार्य रूप से स्थिर बनी हुई है। वे अभी भी हाथों में हंसिया लिये नंगे पैरों अपना अधिकांश काम करती हैं। बीमारियां एवं कुपोषण आदि के होते हुए भी घरेलू एवं अन्य कार्य हाथों–हाथ करती हैं। इस सन्दर्भ में, हम चावल उत्पादन की श्री पद्धति पर अपनी समझ विकसित करते हुए जेण्डर एवं शरीर के महत्वपूर्ण मुद्दों को उपेक्षित नहीं कर सकते हैं।

कार्य करने की बदलती परिस्थितियों में काम का अनुभव

श्री पद्धति चावल उगाने की एक कृषि–पारिस्थितिकी पद्धति है, जिससे छोटे किसान भी कम पानी व कम बीज का उपयोग कर बिना रसायन डाले अच्छा उत्पादन ले सकते हैं। आमतौर पर इसमें श्रम भी कम लगता है। इसके लिए कुछ प्रमुख संस्तुतियां हैं – • छोटे पौधों (10 दिन के) की रोपाई • एक से दूसरी पौध के बीच व्यापक स्थान • बार–बार निराई • मशीनीकरण को वरीयता • बाढ़ नहीं आने वाले क्षेत्रों में खेत को हर समय नम बनाये रखना एवं • जैविक खाद का प्रयोग जो कि किसानों की गतिविधियों एवं उनके विश्वासों से बहुत विपरीत है। ये विपरीत गतिविधियां एवं उससे जुड़ी कार्य की परिस्थितियां कई तरह के शारीरिक अनुभव

> पारम्परिक रूप से निराई में महिलाओं को एक एकड़ खेत की निराई करने में 130–160 घण्टे झुकी मुद्रा में रहना पड़ता है जबकि वीडर मशीन से उतने ही खेत की निराई में मात्र 16–25 घण्टे लगते हैं।

कराती हैं। अन्य गतिविधियों से इसकी विभिन्नता एवं इससे होने वाले फायदों के दर्शाने के लिए तालिका 1 में विस्तृत आंकड़े दिये गये हैं।

बदलती परिस्थितियों में काम करने के अनुभवों को समझने के लिए – कार्य करने का वातावरण, उस वातावरण में बिताया जाने वाला समय, कार्य करने की मुद्रा एवं उस मुद्रा में बिताया गया समय, हाथ में ली गयी सामग्री की संख्या एवं वजन, कार्य का क्षेत्र (जैसे– नर्सरी का आकार), कार्यस्थल की दूरी एवं काम में महिला–पुरूष की सहभागिता, इन सभी मानकों के ऊपर विस्तृत समझ बनानी होगी।

श्री पद्धति में, पौधों की संख्या को नियन्त्रित करने के लिए एक पौधे से दूसरे पौधे के बीच व्यापक दूरी रखी जाती है। नतीजतन प्रति एकड़ औसतन 2–3 किग्रा0 बीज कम लगता है और पौधे तैयार करने के लिए नर्सरी हेतु छोटे स्थान की जरूरत पड़ती है। एक छोटे नर्सरी का मतलब है कि कार्य के बोझ का घटना। इसके अतिरिक्त, 8–15 दिनों के छोटे पौधों को नर्सरी से उखाड़ने के लिए बहुत सावधानी की आवश्यकता होती है तथा इन्हें जितनी जल्दी हो सके, रोपाई कर दिया जाता है। सामान्यतः मुख्य खेत के पास ही नर्सरी को तैयार किया जाता है। इससे नर्सरी स्थल से मुख्य खेत तक धान के पौधों को ले जाने की दूरी घटती है। साथ ही नर्सरी के पौधे काफी कम दिनों के होते हैं। अतः उनका वजन एवं संख्या भी कम होती है। एक फायदा यह भी है कि एक या दो पौधों की रोपाई दूर–दूर करने के कारण श्रमिकों को बहुत देर तक कीचड़ व पानी में नहीं रहना पड़ता है।

एक पौधे से दूसरे पौधे के बीच व्यापक दूरी होने के कारण खर–पतवार घास अधिक उगती है, जिसकी हाथों से निराई करना संभव नहीं है। अतः श्री पद्धति में वीडर (निराई यंत्र) का उपयोग बिलकुल सामान्य बात है। वीडर के प्रयोग से एक तरफ तो खर–पतवार को नियन्त्रित किया जाता है, तो दूसरी तरफ ये मृदा को भुरभुरी बनाते हैं, जिससे मृदा में हवा का संचरण पर्याप्त रूप से होता है, जो पौधों की जड़ों को बढ़ने में सहायक तथा मृदा जीवाश्मों के लिए लाभकारी होता है। वीडर से निराई करने में महिलाओं को स्थाई रूप से झुके नहीं रहना पड़ता है, वे आसानी से अपनी मुद्राएं बदल सकती हैं। इधर–उधर खड़ी मुद्रा में चल सकती हैं।

श्री पद्धति से लाभ तभी संभव है, जब इसके लिए सुझाये गये अभ्यासों का अनुपालन सुनिश्चित किया जाये, परन्तु सभी स्थानों पर सभी संस्तुतियों का पालन होना संभव नहीं है। उदाहरण के लिए, अधिकांश बुजुर्ग महिलाएं वीडर के स्थान पर हाथ से निराई करना जारी रखती हैं। उन्हें लगता है कि वीडर मशीन से निराई करने में उनका दर्द घटने की बजाय बढ़ता ही है। लेकिन, उन्होंने बताया कि जब श्री पद्धति से धान रोपाई के लिए नर्सरी पौधों को उखाड़ा या उसकी रोपाई की तो कम दिनों का और हल्का

धान में रोपाई का काम केवल महिलाओं द्वारा ही किया जाता है

तालिका 1 : महिलाओं द्वारा किये जाने वाले कार्यों की तुलना

कार्य	श्री पद्धति	पारम्परिक पद्धति
नर्सरी प्रबन्धन	एक एकड़ के लिए 3–5 किग्रा० बीज	एक एकड़ के लिए 30–40 किग्रा बीज
	बुवाई एवं प्रबन्धन हेतु बहुत छोटे पौधे	बुवाई एवं प्रबन्ध के लिए बड़े पौधे एवं खाद का उपयोग
	नर्सरी तैयार करने के लिए बाढ़ आवश्यक नहीं।	अक्सर नर्सरी कुछ इंच पानी में रहती है।
पौधों को उखाउड़ना	बुवाई के 8–15 दिनों बाद पौधों को उखाड़ना (इसलिए नर्सरी की देखभाल बहुत कम समय तक करनी पड़ती है)	बुवाई के 30 से भी अधिक दिनों पर पौधों को उखाड़ना।
	पौधों को सावधानीपूर्वक मिट्टी के साथ उखाड़ने के तुरन्त बाद ही खेत में रोपाई कर देते हैं।	महिलाएं झुककर या फिर बाढ़ के पानी में बैठकर पौधे उखाड़ती है और जड़ों से मिट्टी हटाने के बाद पौधों के बण्डल बना देती है। अधिक दिनों का पौध हो जाने के कारण जड़े खींचने में अधिक मेहनत करनी पड़ती है।
नर्सरी के पौधों की ढुलाई	पौधों के बर्तन का भार 5–6 किग्रा० होता है, यदि थोड़ा अधिक दिन का हुआ तो 13–15 किग्रा हो जाता है। यदि किसी कारणवश नर्सरी से पौधे उखाड़ने में कुछ दिनों की देर हुई तो प्रति एकड़ के लिए कुल 80–145 किग्रा भार की ढुलाई करनी पड़ती है।	मुख्य खेत में रोपाई के लिए बोझे को ढोना पड़ता है पुरूष सामान्यत: 8–100 किग्रा और महिलाएं 7–30 किग्रा तक का बोझा ढोती है। प्रति एकड़ खेत के लिए 400 से 1200 किग्रा तक पौधा की ढुलाई करनी पड़ती है। अक्सर कुछ दूरी तक ले जाने के लिए लोग अपने हाथों, कन्धों, गले में लटकाकर और साइकिल से लेकर जाते हैं तथा पूरे खेत में फैला देते हैं।
	पौधों को उखाड़ने और रोपाई करने में 7–25 घण्टे का समय लगता है। बहुधा किसान अपने मुख्य खेत के पास इसकी नर्सरी लगाते हैं ताकि पौधे उखाड़ने व रोपाई करने में कम समय लगे, उन्हें कम चलना पड़े।	नर्सरी से पौधे उखाड़ने तथा मुख्य खेत में रोपाई करने में 80–150 घण्टे का समय लगता है।
रोपाई	महिलाएं रोपाई के समय पौधों को अपने हाथों में पकड़े रहती है क्योंकि इनका वजन 150–300 ग्राम रहता है। ये बीच-बीच में व्यापक स्थान देते हुए छोटे पौधों को कीचड़ में घुसाती है। औसतन एक मिनट में 6–10 स्थान पर पौधों की रोपाई होती है। एक एकड़ खेत की रोपाई के के लिए 70–90 घण्टे लगते हैं।	महिलाओं को अधिक एवं बड़ा पौध रोपाई के लिए लेना पड़ता है जिसका वजन 1–1.5 किग्रा० का होता है। महिलाएं अपने हाथों को कीचड़ में डुबाती है और उनका कलाई तक हाथ कीचड़ में सना रहता है। ऐसा वे एक मिनट में 40–50 बार करती है। पौधों के बीच की दूरी बहुत कम होती है। एक एकड़ की रोपाई के लिए 120–150 घण्टे लगते हैं।
निराई	सामान्यत: मशीन का उपयोग कर 2–3 बार निराई करने से प्रति एकड़ 16–25 घण्टे की खपत होती है।	एक एकड़ खेत की निराई करने में महिलाओं को 130–160 घण्टे झुके रहना पड़ता है।
	इसके अलावा एक बार हाथों से निराई करनी पड़ती है जिसमें खर-पतवारों की वृद्धि के आधार पर 5–9 घण्टे लगते हैं।	

होने के कारण उन्हें कम दर्द हुआ। किसान तो वैसे भी श्री पद्धति से खेती करने के बाद अधिक उपज देखकर खुश हुए हैं। श्रमिकों ने बताया कि कटाई के बाद तैयार बोझे सामान्य धान के बोझों की तुलना में अधिक भारी थे।

तालिका में दर्शाये गये आंकड़ों के अनुसार, श्री पद्धति महिलाओं के कार्य करने की परिस्थितियों में मूलभत बदलाव लाती है। श्री पद्धति में एक–दो पौधों की दूरी पर रोपाई करने के कारण महिलाओं को अधिक देर तक पानी में नहीं रहना पड़ता, जिससे उन्हें जल–जनित बीमारियां भी नहीं होती हैं। जबकि पारम्परिक पद्धति में महिलाओं को नर्सरी से पौधे उखाड़ने, रोपाई करने, निराई करने आदि के लिए सामान्य तौर पर 400–500 घण्टे पानी में झुक कर काम करना पड़ता है। इसका विपरीत असर उनके स्वास्थ्य पर पड़ता था, उन्हें बहुत सी जलजनित बीमारियां हो जाती थीं। जिससे उनके स्वास्थ्य, उनके कार्य, बच्चों की देख–भाल आदि सभी पर असर पड़ता था

और बहुत बार तो उन्हें बीमारियों से उबरने के लिए ऋण भी लेना पड़ता था।

महिलाओं ने यह भी बताया कि जब से वे श्री पद्धति से खेती करने लगी हैं, तब से उनके हाथों और पैरों में होने वाले संक्रमण में कमी आयी है, शरीर दर्द कम हुआ है तथा दिन में उन्हें खाना पकाने, खाने एवं आराम करने के लिए अधिक समय मिल रहा है। श्री पद्धति को अपनाने के प्रमुख कारण जो समुदाय की महिलाओं द्वारा बताये गये उनके अनुसार – अब उन्हें बहुत अधिक समय तक अपने हाथों एवं पैरों को बाढ़ के पानी में नहीं रखना पड़ता है, साथ ही कुछ गतिविधियों जैसे मशीन से निराई आदि में पुरूषों की सहभागिता बढ़ने से उनका कार्यबोझ कम हुआ है, उनके काम के घण्टे कम हुए हैं तथा उनका काम एवं काम करने की मुद्रा में परिवर्तन आया है।

ध्यान देने की आवश्यकता

श्री पद्धति जैसी कृषि पारिस्थितिकी माध्यम लोगों को गरीब व बीमार बनाने वाले हानिकारक तत्वों को बढ़ावा नहीं देती है। चावल उत्पादन के इस विशिष्ट पहलू एवं आगे अनुसंधान पर बहुत कम चर्चा एवं साहित्य उपलब्ध हैं। इन पर ध्यान देने की आवश्यकता है। ठीक इसी प्रकार, श्रमिकों के शरीर एवं उनके कार्य को ध्यान में रखकर तकनीकों/उपकरणों को विकसित व काम करने के लिए डिजाइन तैयार करते समय महिलाओं एवं पुरुषों दोनों को शामिल करने की तरफ भी प्रसार अभिकरणों को ध्यान देना जरूरी होगा। जब वे फलते–फूलते हैं, तभी हमारी कृषि बढ़ेगी और सकारात्मक परिणाम देगी। औरतों के श्रम को घटाने पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है।

आभार

मैं वाशिंगटन यूनिवर्सिटी – एनडब्ल्यूओ–डब्ल्यूओटीआरओ, नीदरलैण्ड की सुश्री ओलिविया वेन्ट एवं डा0 नोरमन उपहाफ का हृदय से आभारी हूं, जिन्होंने उत्साहवर्धन कर एवं फीडबैक देकर हमारे शोध को पूर्ण करने में सहायता दी। मैं उन सभी लोगों का धन्यवाद ज्ञापन करती हूँ, जिन्होंने अपनी जानकारियां मुझसे साझा कीं तथा मैं सांभव, उड़ीसा, भारत के अपने सहयोगियों का भी धन्यवाद देती हूँ, जिन्होंने मुझे शोध कार्य करने की उपयुक्त परिस्थितियां प्रदान कीं।

■

साबरमती टिकी

उड़ीसा, भारत में जमीन से जुड़ी एक संस्था– सांभव के साथ पर्यावरण एवं जेण्डर के मुद्दे पर काम कर रही हैं तथा वाशिंगटन यूनिवर्सिटी, नीदरलैण्ड से डाक्टरेट कर रही हैं।

ई–मेल : sabarmatee@gmail.com

Women forging change
LEISA INDIA, Vol. 17, No.4, Dec. 2015

Issues and Themes of LEISA INDIA Published in English 1999-2015

V.1, No. 1, 1999 - Markets for LEISA and Organic products
V.1, No. 2, 1999 - Stakeholders in Research
V.1, No. 3, 1999 - Restoring biodiversity

V.2, No. 1, 2000 - Desertification
V.2, No. 2, 2000 - Farmer innovations
V.2, No. 3, 2000 - Farming in the forest
V.2, No. 4, 2000 - Monocultures towards sustainability

V.3, No. 1, 2001 - Coping with disaster
V.3, No. 2, 2001 - Go global stay local
V.3, No. 3, 2001 - Lessons in scaling up
V.3, No. 4, 2001 - Biotechnology

V.4, No. 1, 2002 Managing Livestock
V.4, No. 2, 2002 - Rural Communication
V.4, No. 3, 2002 - Recreating living soil
V.4, No. 4, 2002 - Women in agriculture

V.5, No. 1, 2003 - Farmers Field School
V.5, No. 2, 2003 - Ways of water harvesting
V.5, No. 3, 2003 - Access to resources
V.5, No. 4, 2003 - Reversing Degradation

V.6, No. 1, 2004 - Valuing crop diversity
V.6, No. 2, 2004 - New generation of farmers
V.6, No. 3, 2004 - Post harvest Management
V.6, No. 4, 2004 - Farming with nature

V.7, No. 1, 2005 - On Farm Energy
V.7, No. 2, 2005 - More than Money
V.7, No. 3, 2005 - Contribution of Small Animals
V.7, No. 4, 2005 - Towards Policy Change

V.8, No. 1, 2006 - Documentation for Change
V.8, No. 2, 2006 - Changing Farming Practices
V.8, No. 3, 2006 - Knowledge Building Processes
V.8, No. 4, 2006 - Nurturing Ecological Processes

V.9, No. 1, 2007 - Farmers Coming together
V.9, No. 2, 2007 - Securing Seed Supply
V.9, No. 3, 2007 - Healthy Produce, People and Environment
V.9, No. 4, 2007 - Ecological Pest Management

V.10, No. 1, 2008 -Towards Fairer Trade
V.10. No. 2, 2008 - Living soils
V.10, No. 3, 2008 - Farming and Social Inclusion
V.10, No. 4, 2008 - Dealing with Climate Change

V.11, No. 1, 2009 - Farming Diversity
V.11, No. 2, 2009 - Farmers as Entrepreneurs
V.11, No. 3, 2009 - Women and Food Sovereignty
V.11, No. 4, 2009 - Scaling up and sustaining the gains

V.12, No.1, 2010 - Livestock for sustainable livelihoods
V.12, No.2, 2010 - Finance for farming
V.12, No.3, 2010 - Managing water for sustainable farming

V.13, No.1, 2011 - Youth in farming
V.13, No.2, 2011 - Trees and farming
V.13, No.3, 2011 - Regional Food System
V.13, No.4, 2011 - Securing Land Rights

V.14, No.1, 2012 - Insects as Allies
V.14, No.2, 2012 - Greening the Economy
V.14, No.3, 2012- Farmer Organisations
V.14, No.4, 2012- Combating Desertification

V.15, No.1, 2013- SRI: A scaling up success
V.15, No.2, 2013- Farmers and market
V.15, No.3, 2013- Education for change
V.15, No.4, 2013- Strengthening family farming

V.16, No. 1, 2014- Cultivating farm biodiversity
V.16, No. 2, 2014- Family farmers breaking out of poverty
V.16, No. 3, 2014- Family farmers and sustainable landscapes
V.16, No. 4, 2014- Family farming and nutrition

V.17, No. 1, 2015- Soils for life
V.17, No. 2, 2015- Rural-urban linkages
V.17, No. 3, 2015- Water-lifeline for livelihoods
V.17, No. 4, 2015- Women forging change

सामूहिक रूप से सब्ज़ियों की खेती करतीं सदस्य

सामुदायिक सहयोग से खाद्य असुरक्षा को चुनौती

टी.के. ओमना

महिलाओं की क्षमता एवं आत्मविश्वास बढ़ा कर, उनके अन्दर मौजूद दक्षता का उपयोग करते हुए पुनर्चक्रीकरण के माध्यम से कृषि आधारित गतिविधियों हेतु आवश्यक एवं एकीकृत सभी उपागमों के लिए सहयोग प्रदान कर महिलाओं को सशक्त बनाते हुए केरल की गरीब महिलाओं को गरीबी के दलदल से बाहर निकालने में सहयोग मिला है।

केरल में, महिला किसान खाद्य फसलों जैसे – धान, कन्द एवं सब्ज़ियों की खेती में सघनता से संलग्न रही हैं। 1970 से यहां पर एक बड़ा परिवर्तन हुआ और लोग जीवन निर्वाह करने वाली फसलों जैसे चावल और अरवी की खेती को छोड़कर नकदी फसलों जैसे काली मिर्च, कॉफी, अदरक और रबर की खेती करने लगे। एक तो यहां की खराब मृदा और जल संरक्षण गतिविधियां और ऊपर से उन पर की जा रही सघन खेती, इन दोनों की वजह से कृषि उत्पादकता में गिरावट आने लगी। पिछले दशक के दौरान, कृषि की बढ़ती लागत के साथ कीटों–व्याधियों का बढ़ता प्रकोप, मूल्यों में गिरावट आदि के कारण किसान, खेतिहर मजदूर एवं खेती किसानी से जुड़े अन्य कामगर निरन्तर गरीब से गरीबतर होते जा रहे हैं।

वर्ष 2004 में वायनाड जिले के दो पंचायतों में ''रास्ता'' द्वारा एक अध्ययन किया गया, जिसके परिणाम यह दर्शाते हैं कि खाद्य फसलों में लगने वाले श्रम में महिलाओं का योगदान 90 प्रतिशत है। लेकिन नकदी फसलों जैसे केला आदि की खेती करने का सबसे अधिक कुप्रभाव महिलाओं के ऊपर पड़ा। ''रास्ता'' के हाल के अनुमान के अनुसार, वायनाड जिले में, धान की खेती का क्षेत्रफल 40000 हेक्टेयर से घटकर मात्र 12000 हेक्टेयर रह गया है और प्रति कृषि सत्र में महिलाओं को मिलने वाले कार्य दिवसों में लगभग 150000 दिनों की कमी आयी है।

सशक्त होती महिलाएं

रास्ता, वायनाड जिले में ग्रामीण समुदाय, विशेषकर महिलाओं, परम्परागत समुदायों एवं सीमान्त किसानों की समस्याओं के ऊपर वर्ष 1987 से काम कर रहा है। महिलाओं को सशक्त बनाना इसका शुरू से ही एक मुख्य लक्ष्य रहा है। रास्ता ने 1990 में ग्रामीण एवं आदिवासी महिलाओं को एकत्र कर ''बचत एवं ऋण समूह'' बनाया, पूरे जिले में लगभग 12000 गरीब परिवारों को इस प्रकार

के समूहों से जोड़ा गया। आस–पास की, समान विचारों वाली तथा समान आर्थिक स्थिति वाली 10–15 महिलाओं को मिलाकर एक स्वयं सहायता समूह का गठन किया गया। वे सप्ताह में एक बार मिलकर बचत, अपने अधिकारों पर समझ विकसित करने तथा आगे की योजना पर बात करती थीं। 2–3 वर्षों के भीतर समूह के सदस्यों के अन्दर एक मजबूत नेतृत्व तथा सामूहिक रूप से कार्य करने की प्रवृत्ति को बल मिला और इस सामूहिक मजबूती की वजह से समूह ने अपने सदस्यों के लिए आजीविका के वैकल्पिक साधनों की खोज करना प्रारम्भ कर दिया।

कुछ वर्षों बाद यह देखा गया कि महिलाओं को सशक्त बनाने तथा गांव में खाद्य असुरक्षा की बढ़ती समस्या से निपटने के लिए स्वयं सहायता समूह एक बेहतर माध्यम है। आजीविका का प्रारम्भिक स्रोत कृषि आज संकट का सामना कर रही थी। ऐसी स्थिति में रास्ता ने स्थाई कृषि उत्पादन प्रणाली, ज्ञान आदान–प्रदान, प्रक्षेत्र विस्तार सेवाएं एवं फसल विविधीकरण के ऊपर महिला किसानों को प्रशिक्षण देने पर ज्यादा जोर दिया। खाद्य असुरक्षा एवं बेरोजगारी के मुद्दों पर काम करने के लिए, महिलाओं की एक बैठक आयोजित की गयी। बैठक के दौरान उपस्थित अधिकांश सदस्यों का यही सुझाव था कि इस संकट से उबरने के लिए कुछ नया करना चाहिए। स्वयं सहायता से जुड़े गरीब आदिवासी परिवारों तथा सीमान्त परिवारों के 500 किसान इस कार्यक्रम का हिस्सा बनने हेतु आगे आये।

बीज आदान–प्रदान मेला

घरों के भोजन में सब्ज़ियों का महत्वपूर्ण स्थान होता है, पर पिछले कई वर्षों से नकदी फसल के चक्कर में किसान इसे बोना पूरी तरह से बन्द कर दिये थे। इसे फिर से शुरू करने के लिए, बीज आदान–प्रदान मेला का आयोजन किया गया जिसमें सभी महिलाएं अपने–अपने घरों से बीज लाईं और दूसरे किसानों के साथ अदला–बदली कीं। इस मेले में सिर्फ वही महिलाएं प्रतिभाग कर सकती थीं, जो अपने साथ कम से कम एक बीज अवश्य लायें।

प्रारम्भ में 30 समूह की 300 महिला किसान इस बीज आदान–प्रदान मेलों से जुड़ीं। यह बीज आदान–प्रदान मेला दिसम्बर में धान की कटाई के तुरन्त बाद आयोजित किया गया था। मेला के बाद, 5–10 महिलाओं के समूह ने सामूहिक रूप से सब्ज़ियों की खेती की। उन्होंने इसमें जैविक खाद और उर्वरक का प्रयोग किया तथा कीटों के नियन्त्रण हेतु भी घरेलू उपाय ही अपनाया। स्थिति बहुत अधिक बिगड़ जाने पर भी उन्होंने केवल साबुन एवं तम्बाकू मिश्रण (एक पर्यावरण सम्मत कीट नियन्त्रण प्रणाली) का उपयोग किया। एक महीने के अन्दर ही उन्हें उपज मिलना प्रारम्भ हो गया। सबसे पहले पत्तीदार सब्जियां जैसे साग आदि उसके बाद अन्य दूसरी फसल मिलनी प्रारम्भ हुई।

अपने उपयोग के बाद बची सब्ज़ियों को उन्होंने सीधे समुदाय को बेच दिया। इससे एक तरफ तो बिचौलियों के न होने के कारण समूह को अपने उत्पाद का अधिक दाम मिला, वहीं ग्रामीण समुदाय को भी रसायनिक उर्वरकों से मुक्त उच्च गुणवत्ता वाली जैविक सब्ज़ियां मिलीं। इस गतिविधि से परिवार स्तर पर खाद्य उपलब्धता में वृद्धि हुई और अनाज खरीदने पर लोगों की निर्भरता घटी।

कटाई के दौरान, सबसे अच्छी गुणवत्ता वाले उत्पादों को बीज के लिए एकत्र कर उन्हें संरक्षित किया गया और अगले बीज मेला में आदान–प्रदान किया गया। इस प्रकार, इस परम्परा से पारम्परिक प्रजातियों को संरक्षित एवं प्रचारित करने का काम प्रारम्भ हो गया।

पशुपालन में वृद्धि

लगभग 530 सदस्यों ने ऋण तक अपनी पहुंच बनाई और प्रत्येक ने पशु खरीदने के लिए रू0 20000 का ऋण लिया। महिलाओं ने ऋण लेने के लिए समूह के माध्यम से बैंक से सम्पर्क स्थापित किया। गरीब परिवारों तथा स्थानीय अर्थ–व्यवस्था के लिए यह एक बड़ा प्रोत्साहन था। अधिक दूध देने वाली गायों की देख–रेख पर महिलाओं को प्रशिक्षण दिया गया। इस क्षेत्र में वन एवं घास पर्याप्त मात्रा में हैं। खेत से निकले अपशिष्ट चारे का काम करते हैं। इसलिए पशुधन को फसल उत्पादन के साथ एकीकृत किया गया।

औसतन, एक गाय प्रतिदिन 15–20 लीटर दूध देती है। यह सभी दूध सार्वजनिक क्षेत्र दुग्ध वितरण कम्पनी एमआईएलएमए द्वारा स्थापित दुग्ध सहकारी समिति एकत्र करती है। महिलाओं को एक दिन में रू0 600.00 की आमदनी हो जाती है। यह धनराशि पशुओं की देख–भाल की आवश्यकता पूरी करने के साथ ही ऋण चुकाने के लिए भी पर्याप्त होता है। इन महिलाओं के लिए पशुपालन एक बड़ा आयजनक कार्यक्रम है। पशुपालन अन्य बहुत से तरीकों से भी परिवार के लिए लाभप्रद है। पशुओं के गोबर का उपयोग कर सब्ज़ियों एवं धान की खेती को उन्नत बनाया जा रहा है। गोबर का उपयोग बायोगैस उपार्जन के लिए किया जाता है। प्रत्येक बायोगैस टैंक बनाने के लिए खेतिहर परिवारों को रू0 5000.00 अनुदान मिला और शेष धनराशि को या तो उन्होंने श्रम करके चुकता किया या फिर स्वयं सहायता समूहों से ऋण लेकर दिया। बायोगैस संयंत्र लग जाने से ईंधन हेतु लकड़ियों का प्रयोग कम होने के साथ ही बाहरी विद्युत आपूर्ति पर भी लोगों की निर्भरता

घटी है। बायोगैस से निकलने वाला अपशिष्ट पुनः फसलों के लिए खाद बन जाता है।

एसआरआई के माध्यम से चावल उत्पादन को पुनर्जीवित करना

5 महिलाओं के लगभग 40 समूह 200 एकड़ से भी अधिक परिक्षेत्र में श्री पद्धति का प्रयोग करते हुए धान की खेती कर रहे हैं। इस पद्धति से खेती करने में पारम्परिक पद्धति की अपेक्षा 50 प्रतिशत कम बीज लगता है और अधिक उपज लेने के लिए 40–50 प्रतिशत तक कम पानी की आवश्यकता होती है। कनियमबेट्टा पंचायत की एक पारम्परिक महिला किसान थनकम्मा ने अपने एक एकड़ खेत से 3500 किग्रा0 चावल की उपज प्राप्त की, जिससे बहुत से किसान इस तरह की खेती करने के लिए प्रेरित हुए। गाय का गोबर, कम्पोस्ट एवं बायोगैस स्लरी उपलब्ध होने के कारण यह उत्पादन प्रक्रिया पूरी तरह जैविक थी। सब्ज़ियों की तरह ही चावल भी अधिक होने की स्थिति में महिलाएं अच्छा गुणवत्तापूर्ण चावल चाहने वाले स्थानीय लोगों को बेच देती हैं।

अब लोग पहले की तरह पुनः चावल की खेती करने लगे हैं। अब लोगों को खाने के लिए अधिक अनाज मिलने लगा है और अधिक होने पर सदस्य बेचने भी लगे हैं। इससे विशेषकर आदिवासी समुदाय की महिलाओं को रोजगार मिलने लगा है। इस पहल से कुल 5800 श्रम दिवसों का सृजन हुआ। इसके अतिरिक्त, धान के पुआल का उपयोग मशरूम की खेती के लिए किया जाने लगा।

मशरूम की खेती

धान की खेती की इस पद्धति में पुआल की अधिक उपलब्धता होने के कारण सीमान्त किसानों के बीच मशरूम की खेती को प्रोत्साहित किया गया। लगभग 120 महिलाओं को मशरूम की खेती पर प्रशिक्षित किया गया और शेड का निर्माण करने के लिए उन्हें बैंक से ऋण भी दिलाया गया। क्षेत्रीय कृषिगत शोध स्टेशन द्वारा मशरूम के स्पान का वितरण कराया गया। मात्र दो सप्ताह में ही इस गतिविधि से जुड़ी महिलाएं स्थानीय बाजार में रू0 300.00 प्रति किग्रा की दर से मशरूम बेचने में सक्षम हो गयीं। इस प्रकार यह महिलाओं के लिए दूसरा बेहद सफल आयजनक कार्यक्रम रहा।

> इन परिवारों को पहली बार दूध मिलने लगा और इसका सकारात्मक असर उनके स्वास्थ्य पर दिखने लगता है।

बीज मेला में प्रतिभाग करतीं महिलाएं

निष्कर्ष

इस कार्यक्रम की सफलता के लिए कुछ निश्चित तत्वों जैसे– क्षमता अभिवर्धन एवं आत्मविश्वास बढ़ा कर महिलाओं को सशक्त बनाना, उनके अन्दर मौजूद दक्षता का उपयोग करना, आवश्यकता पड़ने पर सहयोग प्रदान करना एवं एक–दूसरे पर निर्भर सभी गतिविधियों को एकीकृत करना आदि सभी जिम्मेदार हैं। संसाधनों के पुनर्चक्रीकरण से निश्चित तौर पर उत्पादन की लागत में कमी आयी है और लोगों की निर्भरता बाहरी संसाधनों पर घटी है।

इस कार्यक्रम का एक सबसे बड़ा प्रभाव यह रहा कि इन परिवारों की महिलाओं एवं बच्चों के स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर पर उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है। इन परिवारों को पहली बार दूध मिला और इससे परिवार के सभी सदस्यों के स्वास्थ्य में बेहतर बदलाव दिखने लगा है। इसके अलावा अन्य उत्पादों जैसे खाद बनाने के लिए गाय का गोबर तथा मूल्य संवर्धित उत्पाद जैसे बायोगैस आदि ने कृषि निवेशों को देखने के इनके नजरिये में व्यापक बदलाव किया है।

सबसे महत्वपूर्ण तो यह है कि महिलाओं के आत्मविश्वास में वृद्धि हुई है और समुदाय के अन्दर उनकी स्थिति में सुधार हुआ है। अब पूरे राज्य में स्थानीय सरकारी पंचायती राज संस्थान इस कार्यक्रम को अपनाने जा रही है। ■

टी.के. ओमना
निदेशक
सामाजिक एवं तकनीकी उन्नति के लिए ग्रामीण अभिकरण (रास्ता)
कम्बलकड पोस्ट आफिस, वायनाड जिला
करेला- 673122
ई-मेल : t.k.omana@gmail.com
वेबसाईट : rastaindia.org

Women forging change
LEISA INDIA, Vol. 17, No.4, Dec 2015